पत्रकारिता के आधारस्तंभ : मुंशी प्रेमचंद

डा. रतन कुमारी वर्मा
एसोशिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
जगत तारन गर्ल्स डिग्री कालेज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय

मुंशी प्रेमचंद कथा सम्राट और उपन्यास सम्राट तो थे ही, उनके इस स्वरूप से सभी अवगत हैं। यदि कोई व्यक्ति कहानी के विषय में जानता है तो वह निश्चित रूप से मुंशी प्रेमचंद द्वारा लिखी प्रसिद्ध कहानियों– कफ़न, पूस की रात, ईदगाह, बूढ़ी काकी, बड़े भाई साहब, शतरंज के खिलाड़ी, ठाकुर का कुँआ का नाम लिये बिना कहानी की बात पूरी नहीं होती। इसी तरह जब उपन्यासों की बात की जाती है तब उनके सभी उपन्यास चलचित्र की भाँति क्रमशः मनः पटल पर आने लगते है और 'गोदान' की चर्चा किये बिना उपन्यास जगत की बात अधूरी रह जाती है। अगर भारत को समझना है तो मुंशी प्रेमचंद की कहानियों एवं उपन्यासों के माध्यम से उत्तर भारत की भाषा, संस्कृति, जीवन, रहन–सहन, जीवन संघर्ष सभी कुछ देखा व समझा जा सकता है। परन्तु इससे अधिक सशक्त उनका पत्रकार का स्वरूप है जिस पर बहुत कम चर्चा होती है।

''प्रेमचंद एक युग हैं, भूगोल हैं, मनोविज्ञान हैं, इतिहास हैं। निरन्तर गतिमान रहना ही उनका धर्म था। प्रेमचंद ने कहा था– मैं बहुत शुभ मुहूर्त में 'हंस'(पत्रिका) का प्रकाशन कर रहा हूँ। रणभेरी बज रही है। 3 जून 1932 को बनारसीदास को उन्होंने पत्र में लिखा– मेरी आकांक्षा बहुत ज्यादा नहीं है। खाने भर को मिल जाता है। मुझे दौलत और शोहरत नहीं चाहिए। पर मेरे भीतर मोटरबम है। मैं तीन, चार श्रेष्ठ पुस्तकें लिख सकूँ जो आजादी के काम आ सके। मेरा मानस का हंस अपनी चोंच में आजादी के संघर्ष की मिट्टी लेकर अपना योगदान कर रहा है।''[1]

स्वाधीनता बहुत बड़ा जीवन मूल्य है। इसे प्राप्त करने हेतु मनुष्य सतत संघर्षशील रहता है। स्वाधीनता के दो स्तर हैं– एक आंतरिक स्वाधीनता दूसरी वाह्य स्वाधीनता। स्वाधीन देश का नागरिक विभिन्न पराधीनताओं जैसे– सामाजिक रूढ़ियों, सामाजिक वर्जनायें, आन्तरिक भेद–भाव के विरूद्ध समता लाने के लिए संघर्ष करता है। वाह्य पक्ष के अन्तर्गत देश की स्वाधीनता प्रमुख है। जब तक आप स्वतंत्र देश के नागरिक नहीं होंगे, तब तक आप अपनी

मौलिक आजादी को हासिल नहीं कर सकते। इस आजादी को प्राप्त करने के लिए विश्व के विभिन्न देशों ने संघर्ष कर आजादी हासिल की है। भारत भी उन्हीं में से एक राष्ट्र है, एक देश है। देश की आजादी को प्राप्त करने के लिए देश के वीरों ने, देश के सच्चे सपूतों ने विभिन्न प्रकार से आजादी की लड़ाई लड़ी। आजादी की लड़ाई में पत्रकारिता सबसे बड़ा शस्त्र है। इस शस्त्र के बिना आप आजादी हासिल नहीं कर सकते। यही कारण है कि मुंशी प्रेमचंद का रचनात्मक लेखन कहानी, उपन्यास, नाटक में जहाँ विभिन्न पात्रों के माध्यम से समाज के विभिन्न संघर्ष को दिखाया गया है, वहीं पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से भी मुंशी प्रेमचंद निरन्तर अपनी आजादी की लड़ाई में, समाज के सुधार में अपना अप्रतिम योगदान देते रहे। इसके लिए उन्होंने माध्यम चुना विभिन्न पत्र तथा पत्रिकाओं को– 'हंस', 'माधुरी', 'जागरण' में वे बराबर लिखते रहे, स्तम्भकार के रूप में लेखन करते रहे।

मानवीय चेतना में सत्य और न्याय का पक्ष सबसे उदात्त होता है। प्रेमचंद का संघर्ष इसी सत्य एवं न्याय की प्राप्ति के लिए था। वे ऐसे साहसिक लेखक थे कि उन्होंने खुदीराम बोस का चित्र अपने कमरे में लटका रखा था। जिसकी यदि अंग्रेजों को जानकारी मिल जाती तो दस वर्ष की सजा अवश्य होती और नौकरी जाती। अमृतराय द्वारा मुंशी प्रेमचंद को 'कलम का सिपाही' कहना उनके कार्यों के अनुरूप ही है। प्रेमचंद 1907 से 1936 तक निरन्तर अपनी कलम से योगदान देते रहे। 'सोज–ए–वतन' कहानी में सीधे कोई विरोधी बात नहीं थी, केवल स्वाधीनता की सुगंध भर थी। उसमें 'अनमोल रत्न' का विशेष आशय के साथ प्रयोग किया गया था। ''वतन की हिफाजत के लिए जो खून का कतरा गिरता है, वह अनमोल रत्न है।''[2] इस वाक्य के कारण यह पुस्तक जब्त हुई। इसके पश्चात ही नवाबराय का अस्तित्त्व समाप्त हुआ और प्रेमचंद का उदय हुआ। उनमें अखबारनवीस बनने की ललक थी, तड़प थी, जो संसार के बहुत कम लेखकों में मिलेगी। अपनी अखबारनवीस बनने की इच्छा प्रेमचंद जी ने कानपुर निवासी अपने मित्र दयानारायण निगम से व्यक्त की। उन्होंने उर्दू में (वार जर्नल) निकालने का निमंत्रण प्रेमचंद को दे दिया। इसके बाद प्रेमचंद माधुरी, जागरण, हंस पत्रिकाओं का सम्पादन करते रहे और विभिन्न अन्य पत्र–पत्रिकाओं में बराबर लेख एवं सम्पादकीय लिखते रहे, स्तम्भकार के रूप में

लेखन कार्य करते रहे। उन्हें इसकी कीमत भी चुकानी पड़ी। 'हंस' और 'जागरण' की दो बार जमानत भी देनी पड़ी। प्रेमचंद ने 1903 ई0 में स्वतंत्र पत्रकारिता आरम्भ की थी और यह क्रम 1930 ई0 में 'हंस' के शुरू होने तक चलता रहा। ''उन्होंने अपने पत्रकारिता के क्षेत्र में लेखन की शुरूआत 'ओलिवर क्रॉमवेल' के विभिन्न प्रसंगों पर टिप्पणी लेखन से की थी, जो 'आवाजे खल्क' में 1 मई 1903 से 24 सितम्बर 1903 तक धाराविक के रूप में छपी थी। इस पत्र के अलावा 'स्वदेश' एवं मर्यादा में भी मुंशी जी रिपोर्ताज एवं टिप्पणियाँ लिखते थे। उर्दू के प्रसिद्ध पत्र 'जमाना' में मुंशी जी रपटों व टिप्पणियों के अलावा 'रफ्तारे जमाना' के नाम से एक स्थायी स्तम्भ भी लिखते थे।''[3]

प्रेमचंद की पत्रकारिता इतनी सशक्त थी, जितनी कि उनकी कहानियाँ या उपन्यास। शब्दों पर उनकी जबरदस्त पकड़ थी। रपट या टिप्पणी में किस तरह की भाषा का प्रयोग करना चाहिए, यह कोई उनसे ही सीख सकता है। कथन की स्पष्टता, भाषा की सरलता, संप्रेषणीयता इतनी सशक्त होनी चाहिए कि कोई आसानी से छोटे से समाचार की भी उपेक्षा न कर पाये। उदाहरण के लिए 'हंस' के 1934 के अंक में प्रकाशित उनके एक लेख को देख सकते हैं। 'जाति भेद मिटाने की आयोजना' शीर्षक से प्रेमचंद ने एक छोटी सी रपट लिखी थी– इस रपट की पहली ही पंक्ति में सूचना दी गई है कि ''बंबई के मिबी यादव ने भेद–भाव को मिटाने के लिए यह प्रस्ताव किया है कि सभी हिन्दू उपजातियों को ब्राह्मण कहा जाये और हिन्दू शब्द को उड़ा दिया जाये, जिससे भेद–भाव का बोध होता है। उसके ठीक बाद प्रेमचंद टिप्पणी करते हैं– प्रस्ताव बड़े मजे का है। हम उस दिन को भारत के इतिहास में मुबारक समझेंगे, जब सभी हरिजन ब्राह्मण कहलायेंगे।''[4] दरअसल प्रेमचंद की पीड़ा यह है कि हम विभिन्न जातियों में बँटे हुए हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या हरिजन। हम अपने आप को सामान्य जन नहीं समझते। जाति के आधार पर श्रेष्ठता की भावना हमारे मन के कोने में कहीं न कहीं दबी रहती है जो अवसर मिलते ही सबसे ऊपर आकर अभिव्यक्ति पाती है। जातिगत भेद–भाव को हम समाप्त करने की स्थिति में नहीं पहुँच पाते हैं क्योंकि जातीयता हमारे खून में रचा–बसा हुआ है। 'हंस' के ही जनवरी 1934 के अंक में प्रेमचंद की एक छोटी सी टिप्पणी छपी है। शीर्षक है– 'अच्छी और बुरी साम्प्रदायिकता'। इसमें मुंशी जी लिखते हैं– ''इंडियन सोशल रिफार्मर नामक पत्र

ने कहा है कि साम्प्रदायिकता अच्छी भी है और बुरी भी। बुरी साम्प्रदायिकता को उखाड़ना चाहिए, मगर अच्छी साम्प्रदायिकता वह है, जो अपने क्षेत्र में बड़ा उपयोगी काम कर सकती है, उसकी क्यों अवहेलना की जाये।''[5] इतनी जानकारी देने के बाद प्रेमचंद की टिप्पणी है– ''अगर साम्प्रदायिकता अच्छी हो सकती है तो पराधीनता भी अच्छी हो सकती है, झूठ भी अच्छा हो सकता है।''[6] प्रेमचंद की पत्रकारिता मुद्दों पर केन्द्रित थी। उन्होंने हर उस विषय पर अपनी कलम चलाई जिससे समाज का, राष्ट्र का, व्यक्ति का हित होता हो। उन्होंने स्वाधीनता संग्राम, अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति, हिन्दू–मुसलमान, छूत–अछूत, मजदूर–किसान, नागरिक, शासन, साहित्य, दर्शन, धर्म, समाज, शिक्षा, संस्कृति, महिला जगत से लेकर राष्ट्रभाषा से जुड़े तमाम मुद्दों पर रिपोर्ताज, टिप्पणियाँ एवं लेख लिखे, उन्होंने केवल समाचार पत्रो–पत्रिकाओं के लिए टिप्पणी, लेख ही नहीं लिखे अपितु सम्पादन कार्य से भी हिन्दी को समृद्ध किया। उन्होंने 1933–34 में 'जागरण' साप्ताहिक पत्र का सम्पादन किया। 1930 से 1936 तक 'हंस' का मासिक पत्र के रूप में सम्पादन किया। 'हंस' और 'जागरण' को प्रेमचंद के सम्पादकत्त्व में अपार लोकप्रियता भी हासिल हुई। सम्पादक के रूप में प्रेमचंद अपने सिद्धान्तों पर हमेशा अडिग रहे। वे महात्मा गाँधी के स्वाधीनता आन्दोलन से भी प्रभावित थे। लोगो को गाँधी जी के आन्दोलन में भाग लेने के लिए प्रेरित करते थे। अंग्रेजी शासन के कुकृत्यों की कठोर निन्दा भी करते थे। यही कारण है कि उन्हें बार–बार अंग्रेजी हुकूमत का कोप भाजन बनना पड़ता था। 'जागरण' के 12 दिसम्बर 1932 ई0 के अंक में प्रेमचंद ने स्वयं इस कोप का ब्यौरा दिया है, हंस की जमानत से हाल ही में गला छूटा है। पाँच महीनों तक पत्र बन्द रहा, इसलिए इतनी जल्दी जमानत का हुक्म पाकर हम क्षुब्ध हुए। इस पर प्रेमचंद जी टिप्पणी लिखते है– ''ऐसे वातावरण में जबकि हर सम्पादक के सिर पर तलवार लटक रही हो, राष्ट्र का सच्चा विकास नहीं हो सकता।''[7] सम्पादक के सिर पर हमेशा तलवारें लटकती रही है हर काल में, हर समय में। उसकी परवाह किये बिना पत्रकारिता करना, सम्पादकीय कार्य करना हमेशा जोखिम भरा रहता है। मुंशी प्रेमचंद ने अत्यन्त विपरीत परिस्थितियों में उन खतरों से खेलकर पत्रकारिता का कीर्तिस्तम्भ खड़ा किया। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन में सक्रिय प्रेमचंद उन चंद पत्रकारों में से थे, जिन्होंने असहमति का साहस और सहमति का विवेक

जगाने के लिए समाज में सामाजिक क्रांति की अलख जगाई। उनकी पत्रकारिता निष्पक्षता, तटस्थता, कर्मठता और साहसिकता का पर्याय थी। प्रेमचंद ने आज से कई वर्ष पूर्व 1905 में 'जमाना' में 'देशी चीजों का प्रचार कैसे बढ़ सकता है', शीर्षक से लम्बी टिप्पणी लिखी थी। वह टिप्पणी जितनी प्रासंगिक तब थी कहीं उससे ज्यादा प्रासंगिक वर्तमान परिदृश्य में है। ''स्वदेशी का अलख जगाने वाले और समाजवाद को ओढ़ने–बिछाने वाले, दोनों बराबर दूरी पर खड़े हैं, इसलिए खुली अर्थव्यवस्था और विनिवेश का अश्वमेघ जारी है। प्रेमचंद की पत्रकारिता इस अश्वमेघ के खिलाफ ललकार है।''[8]

स्वदेश, आज, मर्यादा पत्रों से भी व सम्बद्ध रहे। असहयोग आन्दोलन के जमाने में स्तम्भकार के रूप में उनकी बहुत ख्याति थी। प्रेमचंद स्वयं सक्रिय राजनीति के क्षेत्र में कभी नहीं उतरे, लेकिन पत्रकारिता के माध्यम से स्वतंत्रता आन्दोलन में अपनी महती भूमिका निभाते रहे। साम्राज्यवादी शोषण के खिलाफ उन्होंने खुलकर बिगुल बजाया। स्वराज प्राप्त करने के लिए हमेशा योगदान करते रहे। विभिन्न शीर्षक से उन्होंने देश की आजादी के लिए टिप्पणियाँ लिखी– ''स्वराज मिलकर रहेगा– मई 1931, दमन की सीमा– अप्रैल 1932, काले कानून का व्यवहार– जनवरी 1933, शक्कर पर एक्साइड्यूटी– जुलाई 1933, कोढ़ पर खाज– जून 1935।''[9] इन टिप्पणियों में साम्राज्यवाद के विरोध में उन्होंने लिखा। उनकी सम्पादकीय तटस्थता को जैनेन्द्र जी ने 'ममताहीन सद्भावना' कहा है।

प्रेमचंद ने पत्रकारिता को मिशन के रूप में जिया, फैशन या व्यवसाय के रूप में नहीं देखा। वे पत्रकारिता में पूँजी के प्रभुत्त्व के खिलाफ थे। पत्रकारिता में विज्ञापनों को वे कतई महत्त्व नहीं देते थे। वे पत्रकारिता के बुनियादी सिद्धान्तों व सवालों के हिमायती थे। वे किसी सत्ता प्रतिष्ठान के आगे नतमष्तक होकर पत्रकारिता के कतई पक्षधर नहीं थे। आधुनिक चमक–धमक की पत्रकारिता से उनका कोई नाता नहीं था। इसलिए उनकी पत्रकारिता आज भी पत्रकारों के लिए पाथेय है जो सिद्धान्तों के लिए लड़ना सिखाती है। जन–समुदाय का कल्याण करना चाहती है। जो बेजुबान की जुबान बनकर बोलना जानती है। ऐसी थी प्रेमचंद की पत्रकारिता। उनका साहित्यकार रूप जितना विराट है, तो पत्रकारिता के उनके स्वरूप की चर्चा तुलना में कम होती है। परन्तु पत्रकारिता

का उनका कर्म भी उतना उच्च, दृढ़, देशानुरागी है। आज भी हम उनकी पत्रकारिता से प्रेरणा ले सकते है। पत्रकारिता के क्षेत्र में मुंशी प्रेमचंद का योगदान अद्वितीय है।

सन्दर्भ सूची–

1. वर्मा, डा. रतन कुमारी, स्वाधीनता संग्राम में मुंशी प्रेमचंद का योगदान, साहित्य–भारती, जुलाई–सितम्बर 2002, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृष्ठ–43.
2. वही, पृष्ठ–43.
3. प्रेमचंदः कहानीकार ही नहीं, पत्रकार भी, लाइव हिन्दुस्तान डाट काम, 29 जुलाई 2009.
4. वही
5. वही
6. वही
7. वही
8. प्रेमचंद की पत्रकारिता के सरोकार, विनीत नारायण का लेख, अमर उजाला डाट काम, 30 जुलाई, 2012.
9. वही।